बूँद बूँद ज़हर पिया, पिया के नाम: देवी नागरानी

जिंदगी ने जो कुछ भी मुझे दिया वह मिट्टी सम्मान था. पर मेरी तकदीर मेरे हाथों में थी, उसी हौसले पर मैंने मट्टी को सोना बनाया.

जो जिंदगी मुझे मिली वह मौत से भी बदतर. मौत के पहले मरने का अहसास. हर वक्त उसके साथ मुलाकात ने मेरे दर्द को रफूचक्कर कर दिया. जिसके पास अपना कहने के लिए कुछ भी न हो, उसे मिट जाने का कैसा डर? उस निडरता की डगर पर कदम दर कदम चलते हुए जो हिम्मत और हौसला मैंने अपने अंदर पाया, दुनिया और दुनियादारी से जो तजुर्बा हासिल किया, वही मैं आज अपने शब्दों में अभिव्यक्त कर रही हूँ.

रात के समय औरतों के लिए स्थापित की हुई संस्था में अशिक्षित औरतों को शिक्षा की रोशिनी प्रदान की जाती. उनके अहसासों को जगाया जाता, ताकि वे अपने होने के अहसास और इस जीवन के मकसद को समझ सके. मैंने उनके भीतर हालातों से हार न मानने का हौसला, संघर्ष का जज्बा और आत्मविश्वास के अंकुर बोने की कोशिश की. विश्वास का तत्व 'कि मैं जैसी भी हूँ, अगर किसी से बेहतर नहीं हूँ तो कमतर भी नहीं. अपना मूल्य खुद आंकना है. समय के विरुद्ध युद्ध हारकर अपने जीवन की बागडौर किसी और के हाथ में सौंपना कायरता है. संघर्ष के पहले ही हार मानने वाली बात है. फिर सामने चाहे कोई अपना अज़ीज़ क्यों न हो. पति, घर बार, परिवार की परिभाषा जहां मिथ्या लगे तो समझना चाहिए कि रिश्तो में स्वार्थ के सिवा कुछ नहीं बचा है.

नारी पति को परमात्मा का दर्जा देती है, घर की चौखट को मंदिर का स्थान देती है और अटूट विश्वास के साथ अपना जीवन घर व् घरवाले के हवाले कर देती है. यह कोई फतह पाने की बात नहीं. अपने मतलब को पाने के लिए घर का सरताज, हैसियत की ग़लतफ़हमी के बलबूते पर नारी को कमजोर समझ कर उस पर दबाव डाले, अपनी मर्दानगी का ज़ोर आजमाए, यह मर्दानगी नहीं सरासर कायरता है.

शादी को एक साल हुआ है, पर ऐसा कभी नहीं हुआ जो आज हुआ. स्वरूप काम से जब घर आया तो उसके साथ दो मर्द और दो औरतें साथ थीं. मैंने सोचा साथ काम करने वाले सहयोगी दोस्त होंगे और ये शायद उनकी पत्नियां. मेहमान नवाजी की रस्म अदा करते हुए मैंने उनका स्वागत करते हुए पापड़-पानी उनके सामने रखते हुए चाय के लिए रसोईघर की ओर मुड़ी तो पति स्वरूप ने उनकी तरफ से एक फरमाइश पेश की-

"रूप कुछ पकोड़े तलकर ले आती तो पीने का मज़ा दुगना हो जाता.'

मैं मन ही मन में विचलित हो उठी. मैंने इससे पहले स्वरूप में आज जैसे आसार नहीं देखे थे.

' अरे यार तुम्हारी पत्नी तो बहुत सुंदर है और रसीली भी.'

उन दोनों मर्दों में से एक ने ठहाका मारते हुए कहा. उसके मोटे-मोटे भद्दे होंठ जब कहने के लिए खुले तो उनमें से झलक रहे दांतों के पीले दाग यूं लगे जैसे कोई मगरमच्छ पानी में तैरती किसी मछली को अपना शिकार बनाने की खुशी से चहक उठा हो.

रसोईघर की ओर जाते मैं सरापा डर सी गई. यह क्या? स्वरूप का रूप ही आज बदला हुआ लग रहा था. मेरे साथ यह उसकी दूसरी शादी है. पहली पत्नी गुजर गई थी. बाल बच्चा न था. मैं स्वरूप की ऑफिस के सामने एक स्कूल मैं लाइब्रेरी इंचार्ज थी. उम्र 32 साल, कंवारी, अपने काम से काम रखने वाली, अकेली किराये के माकन में रहती थी. जिस दिन स्वरूप मुझे स्कूल के बाहर निकलते देखकर मेरे पास आया और अपना परिचय देते हुए कहा-' रूपा जी, मेरा नाम स्वरूप है. मैं ऑफिस में असिस्टेंट मैनेजर हूँ. तुम्हें हर रोज़ इसी समय स्कूल से निकल कर बस में चढ़ते देखता हूँ.' ऐसा कहते हुए उसने हाथ की उंगली से अपनी ऑफिस की ओर इशारा किया.

मैं हैरान हुई. उससे पहले मेरे साथ कभी ऐसा कुछ हुआ नहीं था कि कोई मर्द बीच राह में मुझे रोककर मुझसे बतियाने की कोशिश करे. पर मन ही मन उसकी मर्दानगी पर नाज़ हुआ और उसकी हिम्मत की दाद भी देनी पड़ी, इस तरह राह चलती नारी को रोककर बतियाने के लिए.

' आपने मेरा नाम कैसे जाना?'

' तुम कहो! वैसे जिसमें चाह होती है उसके बारे में बहुत कुछ जानने के लिए मन मचल उठता है. मैं तुम्हारे साथ के लिए बहुत लालायित हूँ, तुम्हारे साथ दोस्ती करना चाहता हूँ.'

मई 2023 साहित्य रत्न वर्ष1, अंक1

वह बिना सांस लिए सब कुछ एक साथ कह गया, बिना इस बात की परवाह किये कि वह रस्ते पर खड़ा है. हम दोनों बस स्टॉप के करीब आ पहुंचे थे. दूर से आती मेरी बस को आते देखकर मैं उसके रुकने पर उसमें सवार हुई और चढ़ते ही अपना हाथ हिलाकर उसे बाय किया. एक पल के लिए मुझे खुद पर भी हैरानी हुई कि ऐसा मैंने किस जज्बे की तहत किया. शायद यही कुदरती कशिश है एक स्त्री की एक पुरुष की ओर.... और उस में कुछ गैर वाजिब भी नहीं लगा.

दूसरे दिन 5:00 बजे स्कूल से निकलते मेरी आंखें खुद-ब-खुद सामने की ओर चली गई जहाँ स्वरूप शायद मेरे ही इंतजार में खड़ा था. आगे बढ़ते हुए उसने मेरी आँखों में झांकते हुए कहा-

‘ तुमने कुछ सोचा उस बारे में?’

‘ किस बारे में?’

‘हमारी दोस्ती के बारे में, हमारे साथ के बारे में, हमारे भविष्य के बारे में. तुम अगर हामी भरो और साथ दो तो मैं तुम्हें वह सब कुछ दूंगा जो एक पति अपनी पत्नी को देता है. मेरी पहली पत्नी के बाद मैं अकेला पड़ गया हूँ. तुम चाहो तो शादी के बाद नौकरी कर सकती हो, न चाहने पर छोड़ भी सकती हो. मैं अच्छा खासा कमा लेता हूँ, जिससे हमारी घर गृहस्ती ठीक से चल सकेगी.’

स्वरूप को जैसे ब्रेक लग गई. कारण मेरी हंसी थी, जो रुकने का नाम नहीं ले रही थी. मैं पेट पकड़कर हंसते-हंसते झुकती चली गई, और वह आश्चर्य से मेरी ओर ऐसे देखता रहा जैसे कोई कारण ढूंढ रहा हो.

‘ क्या हुआ?’

‘ सब कुछ हो गया, बाकी बचा नहीं रोया!’

अब स्वरूप के हंसने की बारी थी. हंसते-हंसते वह भी अपने पेट को पकड़कर हंसी रोकने का प्रयास करता रहा. फिर एकदम शांत होकर, गीली आंखों से मेरी ओर देखते हुए मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया और कहा-’ तो मैं क्या समझूं?’

कुछ न कहकर मैंने अपनी हंसी पर काबू पाते हुए उसकी आँखों में देखा और फिर नज़र झुकाते हुए अपना हाथ उसके हाथ से अलग किया. इसी को वह मेरी हामी समझ बैठा. बस मुस्कुराते हुए कहने लगा- ‘थैंक्यू फॉर गिविंग मी योर कंसेंट.’

मैं जैसे बेहोशी से होश में आई.

‘अगले शनिवार को हम कोर्ट मैरिज कर लेंगे. तुम अपनी एक दो सहेलियों को ले आना मैं भी अपने कुछ दोस्तों को साथ लाऊंगा.’

सच में आने वाले शनिवार के दिन हमारी कानूनन कोर्ट मैरिज हुई और हम पति पत्नी ऐलान कर दिए गए. रवायती तौर हमने एक दूसरे के गले में फूलों की मालाएं पहनाईं. रेगिस्टर पर उसके और मेरे दोस्तों के सामने हम दोनों ने हस्ताक्षर किये, रजिस्ट्रार ने मुस्कराते हुए हमें बधाई दी. तद पश्चात मैंने स्वरुप को और उसने मुझे हाथ पर दबाव डालते हुए बधाई दी. उसके बाद हम उन दोस्तों के साथ एक होटल में खाना खाकर, खुशी-खुशी सैर-सपाटा करके रात 11:00 बजे उस घर में पहुंचे जहां स्वरूप रहता था.

घर बहुत बड़ा तो न था, पर दो लोगों के गुजर करने के लिए छोटा भी नहीं था. एक बड़ा बेडरूम, एक हॉल और रसोई घर, बाथरूम और वे सब सुविधाएं जो एक घर में होनी चाहिए.

शादी की पहली रात गुजरी. हम दोनों ने दस दिन के लिए अपनी अपनी छुट्टियां मंजूर करवा लीं, गोवा चले गए. नशीला वातावरण, हरसूं हरियाली, सामने समुद्र जिसमें चढ़ती उतरती लहरें कभी-कभी किनारों से टकराकर शोर मचाती हुई लौट जाती, कभी आगे बढ़कर हमारे पाँव को ठंडक पहुंचा जातीं.

मेरा मन भी कुछ उन्हीं लहरों की तरह हिचकौले खाता, कभी अपने उठाये क़दम पर विश्वास व् अविश्वास की पुल पार करता हुआ उस ठंडक का आनंद लेता, तो कभी इस रिश्ते की गहराई को मापने की कोशिश करता. यह सब इतना जल्दी हुआ कि फैसला करने के लिए वक़्त ही नहीं मिला फिर भी सब कुछ सम्पूर्ण हो गया.

और अब वह मेरा पति है और मैं उसकी पत्नी. गोवा में हम दोनों साथ-साथ खूब घूमते हुए वातावरण का, एक दूसरे के साथ का आनंद लेते रहे. नारियल का पानी रोज़ पीते रहे. एक दिन स्वरूप में मुझे अपनी कसम देकर ताड़ी पिला दी. दूसरी बार ताड़ी में कुछ मिलाकर वही क़सम देते हुए मुझे पिलाया. जहर पीने का यह मेरा पहला घूँट था.

एक दिन सिगरेट का कश लेते लेते मेरी ओर सिगरेट बढ़ाते हुए स्वरूप ने कहा-’ एक कश ले लो, फिर देखना कितना मज़ा आता है?’

मैं चौंकी-’ यह कैसा पति है जो अपनी नवविवाहिता पत्नी को इन अनचाही वस्तुओं से वफिफ करा रहा है. पर था तो मेरा पति, इस

नाते उस रिश्ते पर विश्वास बना रहा.

एक बार से उसे मुझे फिर से ताड़ी पीने की ज़िद की. मेरे 'ना' कहने पर उसके चेहरे का स्वरुप कुछ बदल गया, मुस्कुराकर बात को दूसरी दिशा में ले गया. पता नहीं क्यों मेरे मन में एक अनचाहा अहसास भर गया, जिसमें छिपा हुआ था डर, अविश्वास, और न जाने क्या-क्या! मैं खुद अनजान थी कि ऐसे विचार मेरे मन में क्यों उत्पन्न हो रहे हैं?'

खैर हंसी-ख़ुशी आठ दिन बीत गए, लौटकर घर आए. मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक. फिर वही स्कूल वही ऑफिस, वही घर और चूल्हा-चौका. यूँ ही छः माह गुज़र गए. बाहरी तौर पर सब ठीक-ठाक चल रहा था, पर मन में कही न कही एक अस्थिरता घर कर गई. कहते हैं कि फर्स्ट इंप्रेशन आखिरी इंप्रेशन होता है. वह कहीं भी लागू नहीं हो रही थी. हम फकत रात का खाना साथ-साथ खाते थे, दिन को दोनों की दिनचर्या अपने-अपने समय अनुसार व् सुविधा अनुसार हुआ करती. कभी-कभी स्वरुप रात को घर लौटकर कहता-' मैं खाना खाकर आया हूँ, तुम खा लो.'

मन में सोचती, यह कहाँ के रिवायत का हुकुमनामा है कि खाने का इंतजार करने के बाद आकर यह सज़ा सुनायी जाय, बिना किसी जायज़ कारण के. फिर ऐसा अक्सर होने लगा, और मैंने ज़हर का दूसरा घूंट पी लिया.

एक बार मैं स्कूल से घर लौटी. अक्सर स्वरूप मुझसे आधा घंटा बाद घर पहुंचता. पर उस दिन वह घर पर बैठा, सिगरेट फूंके जा रहा था. कहीं जाने को तैयार बैठा था, कपड़े भी अच्छे पहन रखे थे, इत्र की महक सारे कमरे में फैली हुई थी.

"मैं बाहर जा रहा हूँ. रात को शायद मैं न लौट पाऊं, तुम सो जाना. सुबह मिलते है.'

यह ज़हर का तीसरा घूँट था जो मैंने पी लिया!

हल्की से कड़वाहट ने मेरे लबों को लगभग सी लिया था.

मैंने स्वरूप का रूप देखा था, पर अब लगा उसे जानने लगी थी. यह तो कोई और ही शख्स था, जो उस शख्स में छुपा हुआ बैठा था, जिसकी हर एक परत उतरते ही उसकी शख्सियत मेरे सामने एक नए रूप में जाहिर होती.

ऐसा करते-करते शादी को 11 महीने गुजरे. अब तो यह रोज का अनचाहा सिलसिला बनता गया. या तो वह घर आकर पूरी तरह से बन संवर कर फिर जाता, या खाना खाए बगैर ही सो जाता. मतलब कुछ भी नॉर्मल सा लगे, ऐसा नहीं था. और इस हकीकत ने मेरी जिंदगी की नींव को हिलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी.

क्या करूं, इसके साथ अपना दर्द बांटूं. मन में उथल-पुथल मची हुई रहती. शाम को घर लौटती, खाना पका कर उसके आने का इंतजार करती. बहुत देर के बाद वह खाना फ्रिज में रखकर सोने की कोशिश करती. एक साल पूरा होने के पहले ही खाना पकाने की मेरी चाह कम होते होते, न के बराबर हो गई. कोई खाने वाला भी तो हो जिसके लिए कुछ बनाऊं, पर बनाकर वही खाना फ्रिज में रखूँ, तो किसलिए और किसके लिए?

0

'पकोड़े तैयार है क्या?' स्वरूप रसोई घर के बाहर से स्वरुप की आवाज आई

' हां'

' तो बाहर लेकर आओ और सबके साथ आकर बैठो.' ऐसा कहते हुए स्वरूप में एक ठहाका लगाया. ठहाके में न जाने क्या था कि मेरा खून खौल उठा. कुछ लोगों के लिए बेशरमी की हदें पार करना भी एक आदत होती है. वही जो शर्म की सीमाओं को उलांघने की जुर्रत जानबूझ कर किया करते हैं. आज मैंने ज़हर का चौथा घूंट पिया जिसमें कसैलापन, पहली तीन घूंटों से अधिक था.

'अरे रूपा जी, बाहर आइए, हमसे क्या पर्दा.' एक दोस्त ने वहीं से जोरदार आवाज़ में कहा.

' हमारे बीच में कोई पर्दा नहीं, औरतों और मर्दों के बीच भी नहीं' यह दूसरा मर्द था जिसने पहले वाले की अफज़ाई की.

कड़ाई में खौलते घी की गर्मी से अधिक मेरे भीतर की आग की तपिश थी, लगा मेरे भीतर का खून उबल कर बाहर उफान की तरह उमड़ रहा था. अगर सभी कुछ यूँ जल जाना है तो बाकी क्या बचेगा? उस समय मैं अपना मन रसोई के काम में लगाये रखना चाहती थी. दो-तीन बार स्वरूप ने आवाज़ लगाई –' रूप, आओ आकर हमारे साथ बैठो तो सही', पर न जाने मेरे अंदर में कहाँ से गर्मी का उबाल आया जो मैंने रसोई घर से जोश भरी आवाज में कहा- 'एक बार कहा नहीं, तो नहीं! अब फिर कह रही हूँ कि मैं आप सबके साथ बैठकर न खाऊंगी, न पियूंगी और न ही बैठकर बात करूंगी. आपको जो करना है वो कीजिए. मुझे फिर से आने के लिए आवाज़ मत दीजिये."

मेरी आवाज़ में न जाने कैसी बिजली की गड़गड़ाहट थी, जिसको सुनने के बाद उन्होंने मुझे बाहर आने के लिए आवाज़ ही नहीं दी.

0

मेरी आवाज मैं अभी तक कल वाली गर्मी बाकी रही. गायत्री भवन की महिलाओं को यह बदलाव् बखूबी नज़र आया और उन्होंने अपने अपने ढंग से अपना रवैया ज़ाहिर किया. एक ने कहा-' अरे दीदी यह जो नया सबक आपने हमें याद करने के लिए दिया वह तो बहुत मुश्किल है. याद ही नहीं पड़ता.'

' क्या मुश्किल है उसमें?' मैंने फिर उसी कड़वे लहज़े में पूछा.

' यह राम की पत्नी सीता, रावण के पास रातभर रहकर लौटी, फिर अग्नि परीक्षा और न जाने क्या-क्या लिखा है रामायण के इस पाठ में.' पात्र बहुत है, नाम बहुत है, याद करने इतने आसान नहीं. और एक धोबी की पत्नी का प्रसंग है कि उसकी पत्नी एक दिन घर नहीं आई तो दूसरे दिन धोबी ने उसे घर में आने नहीं दिया यह कहकर कि-' मैं कोई रामचंद्र तो नहीं हूं जो सीता का रावण की वाटिका से लौटने बाद भी उसे घर में रहने दूं.'

'अरे पगली बैठो तो तुम्हें समझाऊं. तुम जो सुबह से रात तक अपने घर में काम करती हो, बच्चों को स्कूल भेजती हो लौटने का इंतजार करती हो, पति को समय पर जरूरत की हर चीज़ देती हो, क्या यह सब तुम याद करती हो. यह सब सहज सहज अपने आप हो जाता है, सिर्फ करने की निस्वार्थ भावना चाहिए. जब जब स्त्री की मानहानि होती है या उसके स्वाभिमान को ठेस पहुंचती है, तब ही यह रामायण महाभारत शुरु होता है.' मन के मंथन कि उपजी बात जबान पर आ ही गयी, ऐसा मुझे लगा.

'दीदी रावण दस सिरों वाला था क्या?'

'हाँ, यह सच है, रोज़ न जाने कितने रावण नकाबों के मुखौटों के पीछे छुपे समाज में घूम रहे हैं. जिनकी करनी कुछ होती है और कथनी कुछ और'. मैंने औरतों को समझाते हुए उसी कडवाहट भरी आवाज़ में कहा.

'अच्छा दीदी अब समझ में आ गया'- यह कहकर वे सभी अपने अपने पथ को याद करने में व्यस्त हो गई.

मैं अपनी सोच की जंजीरों से खुद को आज़ाद करने कराने की कोशिश में अपने अतीत से बाहर निकलकर वर्तमान में आयी.

0

उस रात 2:00 बजे तक ऊपर के कमरे से दो मर्द और दो औरतों की आवाजें, अनुपयोगी मजाक, भद्दे शब्द मैंने अपने घर में सुने, यह मेरा पहला अनुभव था.

मन में एक निर्णय लिया. 8:00 बजे स्वरूप तैयार होकर ऑफिस के लिए निकला और मैं भी 9:00 बजे निकली. फकत उस घर से ही नहीं, उस ज़िंदगी के बीहड़ से जब निकली तो फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा. क्या देखती? क्या था वहां देखने लायक? क्या कुछ था वहां जिसे मैं अपना कहूं. गनीमत यह कि मेरा स्वाभिमान मेरे साथ था. मैंने अपने साथ अपने ज़ेवर, कुछ कपडे और रक़म ली. बाक़ी जो उसका था वहीं छोड़ दिया. दहलीज़ के बाहर आते ही लगा कि मेरे भीतर कुछ था जो टूट गया. मुझे न घर छोड़ने की रंजिश थी, न ही घर के मालिक को छोड़ने की, इतना जरूर जाना मुझे सफ़र में कई समझौते करने पड़ेंगे. एक अफसोस यह भी था कि मैंने उस आदमी को पहचानने में इतनी बड़ी गलती कैसे कर दी ? निर्दोष तो मैंने खुद को भी नहीं माना और खुद के लिए सजा भी मैंने तय की. मैंने उस मौजूदा स्कूल से अपनी इस्तीफा मंजूर करवा कर, पास के छोटे से गांव के एक स्कूल में नौकरी ट्रांसफर करवा ली. बस चार दिन के बाद वहां जाकर काम शुरू किया, गायत्री भवन की महिलाओं को शिक्षा प्रदान करने का काम.

' अरे राधा तुम खड़ी हो जाओ, इस विषय के बारे में जो महसूस करती हो वह सभी के सामने कहो.'

राधा उठ खड़ी हुई, पार्वती की ओर देखते हुए कहने लगी-' पार्वती का पति उसे रात को दारू पीकर बहुत मारता है, और सुबह उठते ही उससे माफी मांग लेता है…

' यह बहु-रूपी मर्द ही तो रावण होते हैं.' ऐसा कहकर मैं चुप हो गई. यह मर्द ही है जो हर फैसले का अख्तियार अपने पास रखता है. औरत के अख्तियार तो नाम मात्र के होते है, रीति रिवाजों की बेड़ियों से जकडे हुए. इसी लिए औरतें अपने हक़ के लिए बगावत नहीं कर पातीं. यह बगावत का अख्तियार भी मर्द ने अपने पास रखा है, सिर्फ़ बर्दाश्त का हक़ औरत को दे दिया है. "पार्वती तुम ऐसी सोच की जंजीरें तोड़ क्यों नहीं देती? मार पीट पर ऐतराज़ जताओ, घर में बगावत करो, उस रावण नाम के मर्द को कभी भी अपनी अहमियत को मत रौंदने देना." कहते हुए मैंने अपने कमरे में जाने की राह पकड़ी.

पंच साल बाद.....

‘रुपा मुझे माफ कर दो’ सुन कर सर उठाया. देखा, मेरे क्लास के सामने भीतर बैठी औरतों के सामने स्वरूप हाथ जोड़कर खड़ा था.

‘ मैंने तुम्हारे साथ ज्यादती की. मैं राह से भटका मुसाफिर तुम्हारे साथ रहते हुए भी खुद को बदल न पाया. आज मैं अपनी की हुई सभी गुस्ताखियों की सजा भुगत रहा हूँ. न मेरी नौकरी रही हैं, न घर, न वे दोस्त जिन्हें मैं अपना कहता था.” कहकर स्वरुप वाकई एक भिखमंगे की तरह आँखों में आंसू लिए विनम्र याचना कर रहा था.

रूप ने उसकी दयनीय हालत देखी और फिर अपना मुंह बेरुखी से मोड़ लिया. उसकी करतूतों ने उसे इस अंजाम तक पहुँचाया था. बस एक नज़र उसके चेहरे पर डालते हुए धीमे से कहा-“रूप तुम अपनी ज़िन्दगी के लिए जो रास्ता चाहो चुन लो, पर मैं कोई सीता नहीं जो इस बनवास के बाद तुम्हारी लंका में फिर से पनाह पाकर अपने विनाश को दावत दूँ. तुम जिस राह से आए हो उसी से लौट जाओ, यही तुम्हारे लिए ठीक है.” कहते हुए मैंने अपने क़दम अपने घर कि ओर मोड़ लिए.

“रूप.....” इसके आगे वह कुछ न कह पाया.

“स्वरूप कभी कभी एक बुझते दीप के सामने सरफिरी हवाएं सर पटक पटक कर दम तोड़ देती हैं. ज़ुल्म और मौत उम्र नहीं देखते. हम सभी कहीं न कहीं हर ज़ुल्म में शरीक हैं. सजा हमें भी मिलनी चाहिए. जो मर्द औरत की अना की रक्षा न कर सके, ऐसे मर्द पर आधारित होने से बेहतर है औरत निराधार ही रहे. मैं इस प्रतिज्ञा को सहृदय स्वीकारते हुए अपनी इस वाटिका में अपना जीवन गुज़ार लूंगी.

‘रूप....मुझे....एक ..मौक़ा....’

‘यह कतई नहीं होगा. विष के मंथन उपरांत जो अमृत पाया है वही मेरे जीवन का निचोड़ है. मैंने जिस राम को अपने मन मंदिर में बिठाया था, उसके भीतर के रावण ने ही उसे मात दी. अब मैं फिर उसे उस पद पर नहीं बिठा सकती. इसी में मेरी अना है, यही मेरा अमल है.’

देवी नागरानी